Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies,
Online ISSN 2278-8808, SJIF 2016 = 6.17, www.srjis.com
UGC Approved Sr. No.49366, JAN–FEB, 2018, VOL- 5/44

जय शंकर प्रसाद के साहित्य में दलितोद्धार

jk/k';ke, **Ph. D.**

ioDrk & fgUnh, jktdh; egk fo- xkMk vyhx<

Abstract

प्रस्तुत शोध,'जयशंकर प्रसाद' के नाटकों / साहित्य में दलित वर्ग के प्रति सामाजिक अन्याया एवं सुधार की भावना को परिलक्षित करता है। पिछड़े वर्ग (दलित वर्ग) की परिभाषा संविधान की धारा 16 (4) तथा धारा 46 में दी गई है। हमारे संविधान निर्माताओं का पिछड़ा वर्ग से आशय था, वो वर्ग जो सामाजिक , शैक्षिक एवं आर्थिक रूप से पिछड़ा है। 'जाति' भी उनमें पिछड़ा होने की पात्रता है, लेकिन केवल यही एक मात्र पिछड़ा होने की पात्रता नहीं है। लेकिन दुर्भाग्यवश केवल जाति को ही पिछड़ा वर्ग की पहचान करने का एकमात्र आधार मान लिया गया। पिछड़े वर्गो में जो लोग आर्थिक रूप से दूसरों से अधिक सबल है, आरक्षण के एक बड़े हिस्से के भागीदार हो गए। इससे हुआ यह है कि वास्तव में जो लोग आरक्षण के असली हकदार थे , उन्हें आरक्षण के लाभ कभी नहीं मिल पाए। इसके अलावा भारत की अनेक जातियों में स्वंय को पिछड़ा साबित करने की होड़ मच गई। जस्टिस चिनप्पा रेड्डी ने एक मामले की सुनवाई के दौरान कहा है: " Nowhere else in the world is there competition to assert bank – wardness and to claim , we are more backward than you." गुजरात सरकार द्वारा गठित राणे आयोग ने भी यह निष्कर्ष निकाला कि विभिन्न वर्गो द्वारा स्वंय को पिछड़ा साबित करने का संगठित प्रयास हो रहा है। यदि इसी तरह पिछड़ा तथा अन्य वर्ग की मांगे उठती रही तो भारत की 80 प्रतिशत जनता आरक्षण के अन्तर्गत आ जाती है। पिछड़ी जाति तथा अन्य पिछड़ी जातियों के 27 प्रतिशत आरक्षण तथा इस आरक्षण लाभ को और अधिक बढ़ाने की माँग के शोर में संविधान निर्माताओं द्वारा प्रदत्त आरक्षण की मूल भावना दब सी गई है। शिक्षा के अभाव में पिछड़ी जातियों को आरक्षण का पूर्ण लाभ नहीं मिल पाया है।

ikfjHkkशिक भाब्दावली: *दलित वर्ग , पिछड़ा, आरक्षण, दलितोद्धार A*

Scholarly Research Journal's is licensed Based on a work at www.srjis.com

भkk/k ijpuk % भkk/k v/;;u dk lEikfnr dju d fy, i.kr% f}rh;d rF;k ij vk/kkfjr वर्णनात्मक भkk/k ijpuk dk puk g] ftlesa ,frgkfld v/;;u i/nfr dk Hkh lekos"kr fd;k x;k g] rkfd v/;;u dh iLrfr ljy fdUr rkfdd :i e dh tk ldA

जय शंकर प्रसाद एंव दलितोद्धार :

'जयशंकर प्रसाद' के नाटकों में दलित वर्ग के प्रति साामाजिक अन्याया एवं सुधार की भावना सबसे अधिक नाटक 'विशाख' मे परिलक्षित होती है। राजा नरदेव ने सुश्रुवा नाम की सारी सम्पत्ति अपहृत करके बौद्ध मठ को दान कर दी तथा उन्हें भूमिहीन कर दिया। उनकी स्थिति इतनी दयनीय हो गई कि पेट भरने के लिए इरावती तथा चन्द्रलेखा को मालिन वेश में सेम की फलियाँ तोड़कर अपना पेट भना पड़ता है। किन्तु विशाख द्वारा देख लेने पर वे सहम जाती है। फलियाँ तोड़कर वृक्षों के नीचे विश्राम करती हुई गीत की ये पंक्तियाँ उनकी दलित अवस्था को दर्शाती हैं। चन्द्रलेखा :–

'सखी री! सुख किसको है कहते ?
बीत रहा है जीवन सारा केवल दुःख ही सहते।।
करूणा , कान्त कल्पना है बस, दया न पड़ी दिखलायी।
निर्दय जगत, कठोर हृदय है, और कहीं चल रहते।।

सखी री! सुख किसको है कहते ?''

विशाख के पूछने पर कि ''सौन्दर्य में सुर–सुन्दरियों को भी लज्जित करने वाली आप लोग क्यों दुःखी हैं? और , ये फलियाँ आप क्यों एकत्र कर रही हैं?''[2] तब भयभीत होकर इरावती बताती है – ''दरिद्रता ने विवश किया है इसी से आज सेम की फलियाँ , पेट भरने के लिए, अपने बूढ़े बाप की रक्षा के लिए , तोड़ ली हैं। यदि आज्ञा हो तो इन्हें भी रख दूँ।''[3] हम लोग तब से अन्नहीन , दीन–दशा में , इस कष्टमयी स्थिति में जीवन व्यतीत कर रही हैं। इन क्षेत्रों का अन्न यदि गिरा पड़ा भी कभी बटोर ले जाती हूँ, तो भी डर कर, छिपकर।''[1] इस प्रकार यह नाग परिवार दलित अवस्था में सामाजिक अन्याय को सहन करता है किन्तु विशाख के मन में उनके जीवन सुधारने की भावना बलवती हो उठती है और वह प्रयासरत हो जाता है। वह प्रेमानन्द को बताता है कि सत्यशील ने ही ''एक कुटुम्ब को बड़ा दुखी बनाया है और उनकी कन्या को अपने विहार में बन्द कर रखा है।''[2]

प्रेमानन्द , विशाख को आर्शीवाद देते हैं कि अपने 'कर्तव्य को निर्भय होकर करो''[3] –

''घबराना मत इस विचित्र संसार से।
औरों को आतंक न हो अविचार से।।
कमी न हो आनन्द–कोश में, पूर्ण हो।
कहीं न चालों में पड़ कोई चूर्ण हो।।
सीधी राह पकड़ कर सीधे चलो।
छले न जाओ औरों को भी मत छलो।।
निर्बल भी हो, सत्य–पक्ष मत छोड़ना।
शुचिता से इस कुहुक–जाल को तोड़ना।''[4]

गुरू का यह आर्शीवाद , उसे दलित बना दिए गए परिवार की रक्षा करने में सहायता करता है और वह साहस से भर कर जनता के साथ नरदेव का विरोध करता है। राजा , सुश्रुवा नाम की सम्पत्ति विहार से वापिस सुश्रुवा को दिलवा देता है तथा सुश्रुवा नाग और उसकी पुत्रियों को दलित अवस्था से मुक्ति मिलती है।

नाटक 'चन्द्रगुप्त' में कहते हैं कि जब नन्द बहुत विलासी हुआ तो उसकी क्रूरता और भी बढ़ गई , उसने भी अपने प्राचीन मन्त्री शकटार को बन्दी बना कर तथा उसके सात पुत्रों को भूख से तड़पा –तड़पा कर मार दिया और उसे दलित अवस्था में रहने को विवश किया। शकटार की केवल एक पुत्री जीवित बची– सुवासिनी। उसे भी अभिनय करके अपना जीवनयापन करना पड़ा। चाणक्य उसे एक स्थान पर वेश्या तक बता देता है।

चाणक्य एक स्थान पर देखता है कि 'यह कौन भूमि–सन्धि तोड़कर सर्प के समान निकल रहा है।''[1] शकटार मिट्टी में से 'वनमानुष के समान निकलता है।''[2] शकटार अपने आप ही कहता है – ''कितने महीने, कितने वर्ष ! स्मरण है। अन्धकूप की प्रधानता सर्वोपरि थी। सात लड़के भूख से तड़प कर मरे। कृतज्ञ हूँ उस अन्धकार का, जिसने उन विवर्ण मुखों को न देखने दिया। केवल उनके दम तोड़ने का क्षीण शब्द सुन सका। फिर भी जीवित रहा– सत्तू और नमक पानी मिलाकर , अपनी नसों से रक्त पीकर जीवित रहा।''[3] चाणक्य जब उसे कहता है कि मैं तुम्हारी सहायता के लिए प्रस्तुत

Copyright © 2018, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

हूँ तो सामाजिक अन्याय से ग्रस्त शकटार की ये पंक्ति उसकी दलित अवस्था को ही उजागर करती है– ''सहायता करोगे? आश्चर्य! मनुष्य मनुष्य की सहायता करेगा, वह उसे हिंस्त्रपशु के समान नोच न डालेगा।

हाँ, यह दूसरी बात है कि वह जोंक की तरह बिना कष्ट दिये रक्त चूसे। जिसमें कोई स्वार्थ न हो, ऐसी सहायता। तुम भूखे भेडियें। ''[1] नन्द के अन्याय एवं क्रूरता से वह इतना क्षुब्ध हो चुका है कि अब किसी पर भी सहज ही विश्वास नहीं करना चाहता। फिर शकटार कहता है – ''देखा है कभी–सात–सात गोद के लालों को भूख से तड़प कर मरते ? अन्धकार की घनी चादर में बरसों भू–गर्भ की जीवित समाधि में एक–दूसरे को अपना आहार देकर स्वेच्छा से मरते देखा है– प्रतिहिंसा की स्मृति को ठोकरें मार–मार कर जगाते, और प्राण विसर्जन करते? देखा है कभी यह कष्ट–उन सबों ने अपना आहार मुझे दिया और पिता होकर भी मैं पत्थर–सा जीवित रहा।''[2] और फिर आक्रोश से भर कर कहता है– ''सावधान हों , वे जो दुर्बलों पर अत्याचार करते हैं। पीड़ित पद–दलित , सब तरह लुटा हुआ। जिसने पुत्रों की हड्डियों से सुरंग खोदी है, नखों से मिट्टी हटायी हैः उसके लिए सावधान रहने की आवश्यकता नहीं। मेरी वेदना अपने अन्तिम अस्त्रों से सुसज्जित है।''[3] शकटार नन्द से प्रतिशोध लेने को तत्पर है वह नागरिकों से बात करता हुआ कहता है–''मनुष्य मनुष्य को इस तरह कुचलकर स्थिर न रह सकेगा । मैं पिशाच बनकर लौट आया हूँ।''[4] इसी दौरान चन्द्रगुप्त , शकटार के पूछने पर कि 'मेरी रक्षा का भार कौन लेता है'[5] , कहता है– ''मैं लेता हूँ। मैं उन सब पीड़ित , आधात–जर्जर , पद–दलित लोगों का संरक्षक हूँ, जो मगध की प्रजा है।''[6] और अन्त में सुधार की भावना से भरा हुआ शकटार ''छुरा निकाल कर नन्द की छाती में घुसेड देता है''[1] इस प्रकार प्रसाद के नाटकों में दलित वर्ग के प्रति सामाजिक अन्याय एवं सुधार की भावना दृष्टिगोचर होती है।

भारतीय समाज छूत–अछूत की व्याधि को सदियों से झेल रहा है, किन्तु इससे मुक्ति मिलती नहीं दिखती। 1950 में जब इस देश में नया संविधान लागू हुआ था तो उसमें अस्पृश्यता को अपराध घोषित कर दिया गया। कानून तो बन गया, किन्तु लोगों की मानसिकता नहीं बदली। आज भी देश के विभिन्न भागों से इस प्रकार के समाचार आते रहते हैं कि अमुक स्थान पर दूल्हा बने दलित युवक को घोड़ी पर नहीं चढ़ने दिया गया, अमुक स्थान पर किसी दलित के शव को उस शवदाह गृह में अग्निदाह नहीं करने दिया गया जिसका उपयोग ऊँची जाति के लोगों के मृतकों के लिए किया जाता है। यह स्थिति भी कम त्रासद नहीं है कि व्याधि से देश का कोई भी भाग अछूता नहीं है। दलित वर्ग को जातिवाद पर आधारित हमारी समाज व्यवस्था की पीड़ा झेलनी पड़ती है। तमिलनाडू में सामाजिक सुधार से जुड़े आन्दोलनों की लम्बी परम्परा है। किन्तु यह प्रदेश आज भी छुआछूत की व्याधि से ग्रसित है। वहां अनेक स्थानों पर आज भी चाय–काफी बेचने वाली ऐसी दुकानें हैं जहाँ स्वर्णो को स्टील या शीशे के गिलासों में चाय दी जाती है और दलितों को प्रयोग के बाद फैंक दिए जा सकने यौग्य प्यालों में। भेदभाव के विरूद्ध जब जागरूक दलित अपना प्रतिरोध व्यक्त करते हैं तो उन पर हिंसक आक्रमण होते हैं। वहाँ छूआ–छूत विरोधी कुछ संगठनों द्वारा व्यापक सर्वेक्षण किए गए हैं। उन्होंने अस्पृश्यता के अनेक बिन्दुओं की पहचान की है। प्राचीनकाल से ही दलित वर्ग को शिक्षा प्राप्ति से वंचित रखा गया। उन्हें भूमि ग्रहण करने या किसी प्रकार की सम्पत्ति रखने का अधिकार तो कभी था ही नहीं। जीवित रहने के लिए कठोर श्रम के अतिरिक्त उनके पास कभी कोई विकल्प नहीं रहा।

Copyright © 2018, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

देश के लगभग सभी भागों में, विशेष रू‍ से गांवों में दलित और सवर्ण बस्तियाँ अलग–अलग बनती रही हैं। तामिलनाडू के मदुरै जिले के एक स्थान उत्थुपुरम में भेदभाव इस सीमा तक है कि सवर्ण जाति के लोगों ने वहाँ मीटर लम्बी एक ऐसी दीवार भी बना ली है जिसमें दलित वर्ग के लोग उनकी बस्ती में न आ सकें। सर्वेक्षण रिपोर्ट कहती है कि अस्पृश्यता विरोधी कानून शिक्षा के प्रसार और आधुनिक जीवन के दबाव के कारण इस व्याधि ने अनेक नए रूप धारण कर लिए हैं। मैला ढोने के काम पर अधिकतर दलितों को ही लगाया जाता है। इस सर्वेक्षण द्वारा यह तथ्य भी उजागर हुआ कि तमिलनाडू के कुछ गाँवों में डाकिए दलितों के धरों में जाकर डाक नहीं देते। उन्हें कहा जाता है कि व स्वयं डाकधर जाकर अपने डाक ले आएँ। बसों में दलितों के चढ़ने पर अनेक अड़चनें डाली जाती हैं। उनकी बस्तियों में बने स्टापों पर बसें नहीं खड़ी की जाती। स्कूलों की दशा बहुत बुरी है। अधिसंख्य अध्यापक सवर्ण जातियों के होते हैं। कक्षा में दलित बच्चों को अलग बैठाया जाता है।परन्तु वर्त्माान परिदृश्य में प्रायः दलित अध्यापक सामान्य वर्ग के विधार्थियों को उनकी जाति के आधार पर अपना गुस्सा निकालते हैं। सर्वेक्षण से यह भी ज्ञात हुआ कि अनके स्कूलों में दलित अध्यापकों द्वारा सामान्य वर्ग के विधार्थियों को शिक्षा प्राप्ति के लिए हतोत्साहित किया जाता है सार्वजनिक वितरण प्रणाली में भी सामान्य वर्ग के विधार्थियों के साथ भेदभाव किया जाता है। उनसे कहा जाता है कि सप्ताह के एक विशेष दिन वे अपना राशन लें। ये शिकायतें भी मिली है कि दुकानदार उन्हें पूरा राशन नहीं देते। गांवों में दलितों को अनेक प्रकार के अधोषित प्रतिबंधों के मध्य जीना पड़ता है। उन्हें केवल मादा कुत्ता पालने की अनुमति होती है। गांव के मंदिर में जब कोई धार्मिक उत्सव मनाया जाता है। तो दलितों से यह अपेक्षा की जाती है कि इन दिनों वे सवर्णो के सामने नहीं आएंगे अपने आपको इनसे दूर रखेंगे। इस प्रकार के सतत् अन्याय के प्रति आक्रोश और प्रतिरोध का भाव दलित वर्ग में उभर रहा है।

तमिलनाडू की ये धटनांए मात्र एक उदाहरण है। इस प्रकार की धटनाएँ देश के सभी भागों में धटित होती रहती हैं। लगता है कि ऊँच–नीच का भेदभाव हमारी मानसिकता का अंग बन गया है। वर्तमाान राजनीति , पढ़े–लिखे और प्रगतिशील समझे जाने वाले नेता भी जाति सूचक नाम से पुकार कर वोट प्राप्त करते है, जिससे समााज में द्वेष प्रत्युत्पन्न होता है।यह स्थिति राष्ट् एंव राष्ट्रीय अखण्डता के लिए घातक है। दलित वर्ग में जैसे–जैसे शिक्षा का प्रसार हुआ है, उन्हें अच्छी नौकरी पाने की सुविधाएँ बढी हैं। इस स्थिति में यदि यह रूढ़िग्रस्त समाज अपने आप को बदलेगा, नही ंतो हमारा समाज जातिगत तनाव और संधर्ष से बुरी तरह पीड़ित रहेगा।

संदर्भः

'जयशंकर प्रसाद' – विशाख , भारती भण्डार लीडर प्रेस इलाहाबाद
आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी–आधुनिक साहित्य भारती भण्डार लीडर प्रेस प्रयाग
मदान इन्द्रनाथ – जयशंकर प्रसाद का चिन्तन , हिन्दी भवन इलाहाबाद
प्रसाद ईश्वरी – हिन्दी साहित्य का इतिहास

Copyright © 2018, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies